अफगानिस्तान में बदलते हालात और भारत की चिंताएँ

drishtiias.com/hindi/printpdf/peace-talks-with-taliban-india

संदर्भ

हाल ही में रायसीना डायलॉग में हिस्सा लेने भारत दौरे पर आए ईरान के विदेश मंत्री जवाद ज़रीफ ने भारत और तालिबान के बीच मध्यस्थता की पेशकश की। ईरान का प्रस्ताव है कि यदि भारत चाहे तो वह तालिबान के साथ भारत की बातचीत शुरू करने में मदद कर सकता है। आज के हालातों में देखा जाए तो अफगानिस्तान में एक बार फिर तालिबान के मजबूत होने से सशंकित भारत के समक्ष यह एक अहम प्रस्ताव है।

लगभग एक जैसी हैं ईरान और भारत की चिंताएँ

ईरान ने भारत से कहा कि तालिबान से बातचीत का ज़रिया उसने खोल रखा है और भारत चाहे तो वह मदद कर सकता है। बेशक, हालातों के मद्देनज़र बेशक ईरान ने तालिबान से सीधे तौर पर बात शुरू कर दी है, लेकिन यह भी सच है कि तालिबान और ईरान के रिश्ते भी बेहद कड़वाहट भरे रहे हैं। ईरान लगातार यह आरोप लगाता रहा है कि अफगानिस्तान से सटे उसके सिस्तानी प्रांत में तालिबान आतंकी गतिविधियों को बढ़ावा दे रहा है।

तालिबान से बातचीत का समर्थन नहीं करता भारत

तालिबान के ढुलमुल रवैये और उसकी पाकिस्तान परस्ती की वज़ह से भारत उसके साथ वार्ता करने के लिये लगातार इनकार करता रहा है। लेकिन अफगानिस्तान में भारत के व्यापक हित हैं और वहाँ की अनेक विकास परियोजनाओं में भारत ने भारी निवेश किया हुआ है। इसलिये जब भी अफगानिस्तान में शांति बहाली के लिये जब किसी प्रकार का कोई प्रयास होता है तो भारत पर भी उसमें शामिल होने का दबाव बनता है। हाल ही में जब तालिबान से अमेरिका और रूस की बातचीत हुई तो भारत के सेनाध्यक्ष जनरल बिपिन रावत ने कहा कि अफगानिस्तान से हमारे हित जुड़े हैं और हम इससे अलग नहीं हो सकते। लेकिन तालिबान के साथ कोई भी बातचीत बिना शर्त होनी चाहिये।

- भारत की हमेशा से यह नीति रही है कि इस तरह के प्रयास अफगान-नेतृत्व में, अफगान-स्वामित्व वाले और अफगान-नियंत्रित तथा अफगानिस्तान सरकार की भागीदारी के साथ होने चाहिये।
- भारत ने 1996-2001 के तालिबानी शासन को मान्यता देने से इनकार कर दिया था। अफगानिस्तान में तालिबान-विरोधी ताकतों को भारत सहायता प्रदान करता रहा है।

- 1990 के दशक में भारत ने अफगानिस्तान में पाकिस्तान प्रायोजित तालिबान शासन से लड़ने वाले Northern Alliance को सैन्य और वित्तीय सहायता भी प्रदान की थी।
- 2006-07 के दौरान तालिबान एक बार फिर उठ खड़ा हुआ और अमेरिकी सेना के लिये चुनौती बन गया। लेकिन भारत ने तालिबान से दूरी बनाए रखी।

गौरतलब है कि मॉस्को में हुई बैठक के बाद भारत के विदेश मंत्रालय ने कहा था कि इसमें शामिल होना हमारी कोई मजबूरी नहीं थी। गैर-सरकारी स्तर पर इसमें शामिल होना हमारा सोचा-समझा फैसला था। हमने कब कहा कि तालिबान के साथ बातचीत होगी? हमने यह भी नहीं कहा कि तालिबान से भारत की बातचीत होगी।

'मॉस्को फॉर्मेट' में गैर-आधिकारिक तौर पर शामिल हुआ था भारत

- रूस की अगुवाई में अफगानिस्तान में शांति बहाली में तालिबान को शामिल करने को लेकर जो प्रयास किये जा रहे हैं, उन्हें अब अधिकांश देश स्वीकार करने लगे हैं।
- इस संदर्भ में पिछले वर्ष नवंबर में रूस में हुई वार्ता में भारत भी शामिल हुआ था, लेकिन भारत ने अपने किसी वरिष्ठ अधिकारी को इस बैठक में भाग लेने के लिये नहीं भेजा था।
- भारत सम्मेलन में गैर-आधिकारिक तौर पर शामिल हुआ था।
- यह पहली बार था जब भारत ने तालिबान के साथ मंच साझा किया। भारत की आशंका के पीछे वज़ह यह थी कि तालिबान में अभी भी पाकिस्तान समर्थक धड़ा सबसे मज़बूत है।
- **'मॉस्को फॉर्मेट'** में अफगानिस्तान भी सीधे तौर पर शामिल नहीं हुआ और अफगान सरकार ने एक स्वतंत्र प्रतिनिधिमंडल मॉस्को भेजा था, जबकि तालिबान के कुछ सबसे वरिष्ठ नेता इसमें हिस्सा लेने के लिये कतर से मॉस्को पहुँचे थे।
- 2001 में तालिबान की सरकार के बहिष्कार के बाद यह पहली बैठक थी जिसमें अफगानिस्तान में शांति बहाली के समर्थक पक्षों ने तालिबान के साथ बातचीत में हिस्सा लिया।
- अफगानिस्तान के मामलों में भारत की आधिकारिक नीति तालिबान के साथ शामिल नहीं होने की रही है।
- अमेरिका, रूस, ईरान और पाकिस्तान हमेशा से तालिबान के साथ बातचीत में शामिल रहे हैं।

कतर और अबू-धाबी में भी हुई थी वार्ता

अमेरिका और अफगान तालिबान के बीच कतर में शांति वार्ता हुई; जिसमें तालिबान के विरोध के चलते अफगान सरकार के अधिकारी शामिल नहीं हो सके। इस वार्ता में अफगान सरकार को भी शामिल करने की मांग हो रही थी, लेकिन तालिबान इसके लिये राजी नहीं हुआ। इससे पहले पाकिस्तान की मध्यस्थता में तालिबान और अमेरिका के बीच अबू-धाबी में बातचीत हुई थी। इस वार्ता में सऊदी अरब, पाकिस्तान और संयुक्त अरब अमीरात के प्रतिनिधियों के साथ अफगान अधिकारी भी शामिल हुए थे।

कौन हैं तालिबान?

तालिबान पश्तो भाषा का शब्द है, जिसका अर्थ है **'छात्र'** । तालिबान का उदय 1990 के दशक में उत्तरी पाकिस्तान में हुआ, जब सोवियत सेना अफगानिस्तान से वापस जा चुकी थी। 1980 के दशक के अंत में सोवियत संघ के अफगानिस्तान से जाने के बाद वहाँ कई गुटों में आपसी संघर्ष शुरू हो गया था और मुजाहिदीनों से भी लोग परेशान थे। ऐसे हालात में जब तालिबान का उदय हुआ था तो अफगान लोगों ने उसका स्वागत किया था। लेकिन अफगानिस्तान के परिदृश्य पर पश्तूनों की अगुवाई में उभरा तालिबान 1994 में सामने आया। इससे पहले तालिबान धार्मिक आयोजनों या मदरसों तक सीमित था, जिसे ज़्यादातर

पैसा सऊदी अरब से मिलता था। धीरे-धीरे तालिबान ने अफगानिस्तान में अपना दबदबा बढ़ाना शुरू किया और बुरहानुद्दीन रब्बानी सरकार को सत्ता से हटाकर अफगानिस्तान की राजधानी काबुल पर क़ब्ज़ा कर लिया। 1998 तक लगभग 90 फीसदी अफगानिस्तान पर तालिबान का नियंत्रण हो गया था। लेकिन 9/11 के बाद अफगानिस्तान में अमेरिकी सेना की कार्रवाई में तालिबान का लगभग सफाया हो गया था और वहाँ की सत्ता उदारपंथियों के हाथों में आ गई। लेकिन पिछले कुछ समय से अफगानिस्तान में तालिबान का दबदबा फिर से बढ़ा है और वह पाकिस्तान में भी मज़बूत हुआ है।

बदली हुई परिस्थितियों में भारत का क्या हो रवैया?

अफगानिस्तान में तालिबान की बढ़ती भूमिका से संशकित भारत की आशंकाओं को दूर करने के लिये अमेरिका के विशेष प्रतिनिधि जाल्माई खलिलजाद भारत आए हुए हैं। भारत के अलावा वह अफगानिस्तान, पाकिस्तान और चीन भी जाने वाले हैं। माना जा रहा है कि भविष्य में अफगानिस्तान की सत्ता में तालिबान को शामिल करते हुए एक नई शासन व्यवस्था बनाने को लेकर यह अमेरिका की तरफ से किया गया अब तक का सबसे बड़ा प्रयास है।

इधर भारत ने भी अफगानिस्तान में तेजी से बदल रहे हालात पर कूटनीतिक सक्रियता दिखाते हुए दूसरे देशों के साथ उच्चस्तरीय वार्ता शुरू कर दी है। अफगानिस्तान में हालात सुधारने का प्रयास कर रहा रूस भी भारत की भूमिका को अहम मान रहा है। रूस यह मानता है कि अफगानिस्तान के समाधान में भारत की भूमिका को नज़रअंदाज़ नहीं किया जा सकता।

गौरतलब है कि अफगानिस्तान में सत्ता परिवर्तन और वहां तालिबान को बड़ी भूमिका देने की सबसे पहले पहल रूस की अगुवाई में ही शुरु की गई थी। बाद में इसमें चीन भी शामिल हो गया। काफी समय तक इनकार करने के बाद अमेरिका ने भी तालिबान को वार्ता में शामिल करने की पहल शुरू की है। ऐसे में भारत को दोनों तरफ से हो रही इस प्रक्रिया में सामंजस्य भी बैठाना है।

हाल ही में अफगानिस्तान के पूर्व राष्ट्रपति हामिद करज़ई ने रायसीना डायलॉग को संबोधित करते हुए कहा भी कि रूस और अमेरिका की अगुवाई में शुरु की गई प्रक्रिया में भारत को और सक्रिय भूमिका निभाने की ज़रूरत है। भारत को सिर्फ इन दो देशों के साथ ही नहीं बल्कि अपने स्तर पर भी अफगानिस्तान में शांति बहाली के लिये कोशिश करनी चाहिये। भारत के बगैर वहाँ कोई भी शांति प्रक्रिया पूरी नहीं होगी।

जिस प्रकार अफगानिस्तान में पाकिस्तान का स्थायी एजेंडा वहाँ पर अपनी सामरिक पहुँच बनाना है, ठीक उसी प्रकार भारत के स्थायी लक्ष्य भी स्पष्ट हैं- अफगानिस्तान में विकास में लगे करोड़ों डॉलर व्यर्थ न जाने पाएँ, काबुल में मित्र सरकार बनी रहे, ईरान-अफगान सीमा तक पहुँच निर्बाध रहे और वहाँ के पाँचों वाणिज्य दूतावास बराबर काम करते रहें। इस एजेंडे की सुरक्षा के लिये भारत को अपनी कूटनीति में कुछ बदलाव करने भी पड़ें तो उसे पीछे नहीं हटना चाहिये, क्योंकि यही समय की मांग है।